अपराधशास्त्र

Criminology

"अपराध है, एक गुनाह।
आपराधिक भावना देती है, इसे पनाह।।"

—डॉ० अशोक कुमार यादव

डॉ० अशोक कुमार यादव

अपराधशास्त्र

Criminology

डॉ० अशोक कुमार यादव

एम०एससी० (रसायन विज्ञान), एम०एड०,
एम०ए० (समाजशास्त्र), नेट, सैट एवं पीएच०डी० (समाजशास्त्र)

सहायक आचार्य (समाजशास्त्र)

राजकीय महाविद्यालय, मालाखेड़ा, अलवर (राज०)

ASSOCIATED
PUBLISHING HOUSE

प्रथम संस्करण 2023

ISBN 978-81-955740-0-1

© लेखक

इस पुस्तक के किसी भी अंश का प्रतिलिपीकरण, ऐसे यन्त्र में भण्डारण जिससे इसे पुनः प्राप्त किया जा सकता हो या स्थानान्तरण, किसी भी विधि से, यांत्रिक फोटो प्रतिलिपि, इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्डिंग अथवा किसी अन्य रीति से, बिना लेखक/प्रकाशन की पूर्व अनुमति के नहीं किया जा सकता है।

प्रकाशक :

Associated Publishing House

ब्लॉक–77, संजय प्लेस,

आगरा।

विषय-सूची

अध्याय–01	अपराधशास्त्र **डॉ० वन्दना गुप्ता**	01–08
अध्याय–02	अपराध : एक परिचय **दया राम जागा**	09–15
अध्याय–03	अपराध एवं कानून **डॉ० प्रमोद कुमार बैरवा**	16–24
अध्याय–04	समाज एवं भ्रष्टाचार **प्रकाश चन्द यादव**	25–32
अध्याय–05	महिला सुरक्षा एवं अधिकार **डॉ० टीकम चन्द बैरवा**	33–44
अध्याय–06	बाल अपराध एवं कानून **हुकम चन्द प्रजापति**	45–58
अध्याय–07	बाल अपराध एवं पुलिस **डॉ० हरि राम तिहाड़ा**	59–70
अध्याय–08	महिला सशक्तिकरण **सत्यवान**	71–78
अध्याय–09	महिला हिंसा **राजवीर यादव**	79–92
अध्याय–10	बाल अपचारी एवं कानून व्यवस्था **सोमवीर**	93–104
अध्याय–11	कानून एवं महिलाएँ **डॉ० भोमाराम**	105–109

Chapter-12	Introduction of Criminology **Gyanesh Kumar Sharma**	110-121
Chapter-13	Tools of Comparative Criminology **Dr. Dhara Singh Kamval**	122-132
Chapter-14	Causes of Crime **Dr. Shankar Lal Saini**	133-141
Chapter-15	Cyber Crimes **Hemant Goyar**	142-147
Chapter-16	Sexual Violence : Rape and Justice **Dr. Hanuman Sahai Meena**	148-156
Chapter-17	White-Collar and Street Crime **Dr. Anjana Verma**	157-165
Chapter-18	Juvenile Delinquency **Surendra singh**	166-179
Chapter-19	Feminist Criminology **Dr. Lokesh Kumar Sharma**	180-190
Chapter-20	Probation and Parole **Dr. Sukhlal Yadav**	191-207
Chapter-21	Criminal Behaviour **Dr. Chitra Karamchandani**	208-224
Chapter-22	Women Empowerment : Legislative and Judicial **Dr. Sunita Kumari**	225-240
Chapter-23	Women's Rights in India **Dr. Gajendra Kumar Yadav**	241-252

Chapter-24 Criminology and Cyber Crime 253-260
Sunita Sharma

Chapter-25 Crime : Three Clusters 261-275
Dr. Daya Chand Dagur

Chapter-26 Problems and Protection of Women's 276-284
Dr. Swadesh Yadav

संदर्भ ग्रन्थ सूची **(Bibliography)** 285-301

10

बाल अपचारी एवं कानून व्यवस्था

सोमवीर
एक्सटेंशन लेक्चरर (राजनीति विज्ञान)
राजकीय महाविद्यालय,
नारनौल (हरियाणा)

प्रस्तावना

हम समस्त भारतीय प्रादेशीय अधिनियमों को दो श्रेणियों में बाँट सकते हैं। एक श्रेणी में हम इस प्रकार के कानूनों को ले सकते है, जो बच्चों को सामाजिक कुरीतियों में पड़ने से रोकता है, तथा अपराध करने वालों के साथ सरकारी व्यवहार निश्चित करता है। इस प्रकार के कानून, जिसमें अपराधी प्रवृत्ति तथा अपराधी दोनों का निदान और विधान है, **सम्पूर्ण बाल अधिनियम** कहा जायेगा। दूसरी श्रेणी में, वे अधिनियम आते हैं, जिनके द्वारा केवल कुछ श्रेणी के **अप्रौढ़ अपराधियों के दण्ड या चिकित्सा** की व्यवस्था है। प्रथम श्रेणी के नियम **महाराष्ट्र, मद्रास, मध्य प्रदेश, पश्चिमी बंगाल, आन्ध्र, केरल तथा मैसूर** में लागू हैं, तथा दिल्ली में भी यह नियम लागू है।

पंजाब का सन् 1949 का अप्रौढ़ अधिनियम, उत्तर प्रदेश का सन् 1951 तथा सन् 1952 का अप्रौढ़ अधिनियम और गुजरात में सौराष्ट्र का सन् 1955 का अप्रौढ़ अधिनियम अभी ठीक से कार्यान्वित नहीं हो सका है। दूसरी श्रेणी में जो नियम आते हैं, उनमें असम, मध्य प्रदेश तथा राजस्थान में लागू **"तम्बाकू सेवन**

अधिनियम" मद्रास का "**अनैतिक व्यापार अधिनियम**" सौराष्ट्र, पटियाला तथा कुछ पूर्वी पंजाबी रियासतों में पहले से प्रचलित बाल मजदूर अधिनियम उल्लेखनीय हैं। ऐसा ही एक कानून **अखिल भारतीय प्रोबेशन एक्ट (1958)** है। कुछ प्रादेशीय प्रोबेशन एक्ट भी ऐसे हैं, जो कतिपय अपराधों पर प्रोबेशन अफसर की निगरानी में, अपराधी को प्रोबेशन पर छोड़ने के सम्बन्ध में है। इन कानूनों के द्वारा भी आंशिक सेवा होती है। कोड़े से मारने का दण्ड देने का कानून, कुछ प्रदेशों में है, जिसके अनुसार जेल भेजकर कोड़े लगा दिये जाते हैं। **रिफार्मेटरी स्कूल** तथा **बोर्स्टल स्कूल** का कानून भी, द्वितीय श्रेणी में आता है।

प्रथम अपराध पर छोड़ने का नियम **उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, मद्रास, गुजरात तथा बिहार** में लागू है। सुधारक स्कूल में तथा बोर्स्टल स्कूल एक्ट असम, बिहार, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश, मद्रास, उड़ीसा, पंजाब, उत्तर प्रदेश, पश्चिमी बंगाल, मैसूर, गुजरात तथा राजस्थान में लागू हैं। अब **भारत सरकार ने सन् 1958 का प्रोबेशन एक्ट** सभी प्रदेशों में लागू कर दिया है, लेकिन इसकी रूपरेखा सभी स्थानों में कार्यरूप में परिणित नहीं हुई है।

सजा देने के अतिरिक्त कोड़े लगाने की कानूनी व्यवस्था **असम, मध्य प्रदेश, उड़ीसा और गुजरात** आदि राज्यों में थी। बोस्टर्ल अधिनियम आन्ध्र प्रदेश, बम्बई, मद्रास, मैसूर, पंजाब, उत्तर प्रदेश, पश्चिमी बंगाल और मध्य प्रदेश राज्यों में है। भारतवर्ष में हाल में पारित होने वाले अधिनियमों पर आवश्यक रूप से **लीग ऑफ नेशन्स की घोषणा (1946)** का भी प्रभाव पड़ा है, जो बच्चों को दिये जाने वाले अधिकारों से सम्बन्धित है। इस घोषणा में कहा गया है, कि सभी देशों के पुरूष एवं स्त्रियाँ, यह स्वीकार करते हुये, कि मानव होने के नाते बच्चों की सर्वश्रेष्ठ देखभाल की जानी चाहिये, प्रजाति, राष्ट्रीय या धार्मिक कारणों को ध्यान में न रखते हुए, यह घोषणा करते हैं, कि हम :–

- बच्चों को भौतिक तथा आध्यात्मिक रूप से विकसित होने के लिये आवश्यक साधनों को उपलब्ध करेंगे।
- भूखे बच्चों को खाना, रोगी बच्चों की चिकित्सा, पिछड़े बच्चों की सहायता, दोषी बच्चों को सुधार करेंगे।
- मुसीबत के समय सबसे पहले बच्चों को सहायता देंगे।
- बच्चों को अपनी जीविका कमाने योग्य बनायेंगे, तथा उनका किसी भी प्रकार से शोषण नहीं होने देंगे।

बाल सुधार गृह

बाल सुधार गृह को "**सुधार विद्यालय**" भी कहते हैं, क्योंकि इसकी स्थापना "**भारतीय सुधार अधिनियम, 1897**" के अनुसार की गयी थी। **फेयर चाइल्ड (1974)** ने बाल सुधार गृह को "**एक संस्था जिसकी स्थापना मूल रूप में, अल्पवयस्क, प्रौढ़ और बालोत्तर अपराधियों के पुनर्वास के लिए की जाती है**", कहकर परिभाषित किया है। उत्तर संरक्षण कार्यक्रम सलाहकार समिति की रिपोर्ट के अनुसार, "**सुधार विद्यालय वह संस्था है, जिसमें साधारणतया 16 वर्ष से कम उम्र के बच्चे भर्ती किए जाते हैं, जो पहले सजा काट चुके होते हैं, और जिन पर माता–पिता या किसी अन्य का कोई नियंत्रण नहीं रहा होता।**"

प्रादेशिक अधिनियम

अप्रौढ़ अपराधियों के सुधार एवं इस समस्या की रोकथाम के लिये, अनेक प्रादेशिक अधिनियमों में बाल न्यायालयों की स्थापना और कानूनी कार्यवाही की व्यवस्था भी की गई है। अधिनियमों को लागू करने के लिये वांछनीय मशीनरी के पाँच भाग है :–

- रिमाण्ड होम।
- अप्रौढ़ न्यायालय।
- परिवीक्षा।
- संस्थात्मक उपचार।
- उत्तर रक्षा।

रिमाण्ड होम

बालक की गिरफ्तारी के पश्चात् न्यायालय में उसके मुकदमें की सुनवाई तक, उसे किसी जेल या पुलिस की हिरासत में नहीं रखा जाता, उसे तुरन्त एक सदन में भेज दिया जाता है, जिसे अप्रौढ़ रिमाण्ड होम कहते हैं। द्वितीय पंचवर्षीय योजना के आरम्भ में, कुल 58 रिमाण्ड होम थे, जिनमें से 43 बम्बई में और 12 मद्रास राज्य में थे। यह रिमाण्ड होम एक प्रशिक्षित सामाजिक कार्यकर्त्ता के आधीन होता है। **महाराष्ट्र, गुजरात, मद्रास, पश्चिमी बंगाल, और दिल्ली** में ऐसे रिमाण्ड होम स्थापित कर दिये गये हैं। जयपुर में दो रिमाण्ड होम है, एक लड़कों के लिए और दूसरा लड़कियों के लिये। इन रिमाण्ड होमों में एक परिवीक्षा अधिकारी बच्चे के **व्यक्तिगत, पारिवारिक, और उसके आस–पड़ौस के**

वातावरण का अध्ययन करता है, ताकि न्यायालय के सामने उस बालक का स्पष्ट चित्र रखा जा सके। होम में बच्चों को अनुशासन एवं स्नेहमय वातावरण में रखा जाता है और उन्हें शिक्षा भी दी जाती है। न्यायालय इस बात का पूरा–पूरा ध्यान रखता है, कि बालक को कम से कम अवधि के लिये, वहाँ बन्दी रखा जाए। यहाँ केवल उन्हीं बालकों को रखा जाता है, जिनके लिये ऐसा करना जरूरी समझा जाता है। जैसे घर से भाग जाने वाले या बिना घर–बार के बालक या जिनके घर के वातावरण ठीक नहीं है, या जिनकों दूसरों की सुरक्षा की दृष्टि से बन्द रखना जरूरी हो, या ऐसे बालक जिनके माँ–बाप पर यह भरोसा नहीं किया जा सकता, कि वे उन्हें पेशी के दिन न्यायालय में उपस्थित करेंगे, ऐसे सभी बच्चों को रिमाण्ड होम में रखा जाता है।

बाल न्यायालय

बाल न्यायालय को **"किशोर न्यायालय"** भी कहा जाता है। बाल न्यायालय को परिभाषित करते हुए, **एम.जे.सेठना (1964)** ने लिखा है, **"बाल न्यायालय विशेष न्यायालय होते हैं, जिनका उद्देश्य अल्पवयस्क अपराधियों और बच्चों, जिन्हें संरक्षण की आवश्यकता होती है, को मदद और संरक्षण देना होता है।"** सामाजिक विधान के अनुसार विशेष न्यायालय, जिन्हें बाल न्यायालय कहते हैं, बालकों से सम्बन्धित मुकदमों पर विचार करते हैं। जैसा कि विदित है, महाराष्ट्र, मद्रास, हैदराबाद, सौराष्ट्र, पश्चिमी बंगाल, आन्ध्र तथा दिल्ली में अप्रौढ़ न्यायालय है। अविभाजित बम्बई प्रदेश में इस प्रकार के 31 न्यायालय काम कर रहे थे। महाराष्ट्र प्रदेश में इनकी संख्या 22 है। **बम्बई, शोलापुर, पंढरनुर, नासिक, मनमाड, पूना, सतारा, सूरत में अप्रौढ़ न्यायालय** है। गुजरात में भी अहमदाबाद, श्रीरामपुर, संगमनेर, जम्मूसर तथा बड़ोच में अप्रौढ़ न्यायालय है। पश्चिमी बंगाल में कलकत्ता तथा हावड़ा में अप्रौढ़ न्यायालय है। मद्रास में कोयम्बटूर, त्रिचनापल्ली तथा बेलोर में 3 न्यायालय है। दिल्ली तथा हैदराबाद में भी अप्रौढ़ न्यायालय है।

जिन प्रदेशों में अप्रौढ़ न्यायालय की रचना होने का आदेश हो चुका है, पर अप्रौढ़ न्यायालयों की स्थापना नहीं की जा सकी है, वहाँ यह कार्य फौजदारी न्यायालय करते हैं। अप्रौढ़ न्यायालयों की स्थापना, इस सिद्धान्त को दृष्टि में रखकर की गई है, कि बालक की आदतें या उसका चरित्र अपरिपक्व होता है और उसे स्वस्थ एवं उपयोगी बनाया जा सकता है। अधिकांशतः अप्रौढ़ अपराधी अस्वस्थ वातावरण, अस्वस्थ पारिवारिक परिस्थितियों और दरिद्रता के शिकार होते हैं, अतःएव उनके पुनः संस्थान की गुंजाइश रहती है। बम्बई, दिल्ली और

मद्रास में इस प्रकार के न्यायालय एक अलग कमरे में लगाये जाते हैं, नियमित कचहरी में नहीं। अपराधी के लिये कोई कटघरा नहीं होता, वकीलों के लिये अलग कोई स्थान नहीं होता, और न मजिस्ट्रेट के लिए कोई ऊँची कुर्सी होती है। न्यायालय कहीं और न होकर बच्चों के रिमाण्ड होम के एक साधारण कमरे में होता है, जिसमें एक मेज पर मजिस्ट्रेट बैठता है, और दूसरी मेजों पर परिवीक्षा अधिकारी और सरकारी अधिवक्ता बैठते हैं। कार्यवाही में कानून के पालन में कोई कठोरता नहीं होती, वातावरण घर जैसा होता है, तथा बच्चे को किसी प्रकार का भय नहीं दिखाया जाता। बच्चा हर बात का तत्काल उत्तर देता है। न्यायालय का अध्यक्ष प्रायः वैतनिक मजिस्ट्रेट होता है। बम्बई का अप्रौढ़ न्यायालय देश के अप्रौढ़ न्यायालयों में सबसे बड़ा है। वहाँ एक पूरे समय का मजिस्ट्रेट होता है। इस मजिस्ट्रेट की नियुक्ति, उसके कानूनी ज्ञान के आधार पर नहीं, वरन् अप्रौढ़ समस्याओं को सुलझाने के उसके अनुभव एवं प्रशिक्षण के आधार पर होती है।

संस्थात्मक उपचार

अन्य सब तरीकों के असफल होने पर अपराधी को किसी अप्रौढ़ सदन, मान्यता प्राप्त स्कूल अथवा अन्य उपयुक्त संस्था के सुपुर्द करना ही, अंतिम उपाय है। ऐसी संस्थायें सरकारी भी होती है, तथा निजी भी। निजी स्कूलों का नियमित रूप से निरीक्षण होता है, और अगर सरकार को सन्तोष न हो तो, वह इनकी मान्यता रद्द कर सकती है। संस्थाओं में स्वभावगत समस्याओं का उपचार किया जाता है, कई दस्तकारियों को प्रशिक्षण दिया जाता है, और पुस्तकीय शिक्षा का प्रबन्ध किया जाता है। बच्चों को अनुशासन और दायित्व में व्यवहारिक प्रशिक्षण दिया जाता, और उनकी ओर व्यक्तिगत ध्यान दिया जाता है।

सारे प्रशिक्षण का ध्येय मुख्य रूप से बालक की समाज विरोधी प्रवृत्ति को समाप्त करना है, और इसलिये उसे ऐसे वातावरण में रखा जाता है, जो सामाजिक दृष्टि से उसके निर्माण में सहायक हो। संस्था के कर्मचारी बालक के साथ माँ–बाप की भाँति सहानुभूति का व्यवहार करते हैं, और इस प्रकार वे संस्था के आवासियों का प्रेम विश्वास प्राप्त कर लेते हैं। यह उल्लेखनीय है, कि हमारे देश में ऐसी ऐच्छिक संस्थायें इनी–गिनी ही हैं। कुछ सार्वजनिक तथा धार्मिक संस्थाओं ने इधर ध्यान दिया है। किन्हीं संस्थाओं में सरकार के प्रतिनिधि सदस्य के रूप में उनकी समितियों में भी हैं। कुछ को केन्द्रीय अथवा प्रादेशिक सरकार द्वारा आर्थिक सहायता प्राप्त होती है। **उत्तर प्रदेश, मद्रास, महाराष्ट्र, पश्चिमी बंगाल, बिहार तथा दिल्ली में ऐसी संस्थायें हैं।** अब प्रादेशिक सरकारों का ध्यान इधर गया है, और वे बोर्स्टल स्कूल, औद्योगिक स्कूल, अनाथालय, अप्रौढ़

अपराधियों की पृथक् जेल, अप्रौढ़ सुधार गृह इत्यादि खोल रही हैं। कुछ सामाजिक संस्थाओं का तथा अप्रौढ़ अदालतों का घनिष्ठ सम्बन्ध भी स्थापित हो गया है। बम्बई तथा मद्रास की अप्रौढ़ सहायक समितियाँ इसकी उदाहरण हैं। महाराष्ट्र में ऐसी सामाजिक संस्थाओं तथा अदालतों को परस्पर सम्बन्ध काफी अच्छे है, तथा दोनों एक दूसरे से लाभान्वित होते हैं। मद्रास, बिहार तथा उत्तर प्रदेश में प्रोबेशन विभाग पूर्णतः सरकार के अधीन है। पश्चिमी बंगाल में पुरूष अप्रौढ़ अपराधियों से लिए पृथक् गृह हैं।

परिवीक्षा हॉस्टल

न्यायालय जब किसी बाल अपराधी को परिवीक्षा पर छोड़ता है, और जब किसी बच्चे के माता–पिता या संरक्षक नहीं होते, तो उन्हें परिवीक्षा हॉस्टल में रखा जाता है। ऐसे हॉस्टल में रहने वाले व्यक्ति को, दिन में नौकरी करने एवं घूमने–फिरने की स्वतंत्रता होती है, किन्तु रात्रि को ठीक समय पर वापिस वहाँ पहुँचना, उसके लिए अनिवार्य होता है। हॉस्टल वार्डन इन लोगों की गतिविधियों पर निगरानी रखता है।

पोषण–गृह एवं सहायक–गृह

कई राज्यों में बहुत कम आयु के बाल अपराधियों के लिए पोषण–गृह तथा सहायक–गृह स्थापित किए गए हैं। पोषण–गृहों में 10 वर्ष से कम आयु के बच्चों को रखा जाता है। ये ऐसे बच्चे होते हैं, जिनके माता–पिता में विवाह विच्छेद या परित्याग हो गया हो, या जिनकी मृत्यु हो गई हो, अथवा लम्बे समय की कैद हो गई हो। ऐसे बच्चे नियन्त्रण के अभाव में आवारागर्दी करते हैं, तथा उनके भरण–पोषण की कोई व्यवस्था नहीं होती। चूँकि 10 वर्ष से कम आयु के बच्चों को प्रमाणित स्कूलों में नहीं रखा जाता, इसलिए उनके लिए पोषण गृहों की व्यवस्था की गई है। ऐसे गृहों का उद्देश्य बाल अपराध को रोकना है। इन गृहों का संचालन स्वयंसेवी संस्थाओं द्वारा किया जाता है, और सरकार अपनी ओर से अंशदान देती है। इस प्रकार के पोषण–गृह मुम्बई और चेन्नई में काफी है। भारत में इस समय सरकार द्वारा सहायता प्राप्त 48 पोषण–गृह कार्य कर रहे हैं। प्रमाणित स्कूलों एवं पोषण–गृहों से जुड़ी हुई संस्था सहायक–गृह है। पहले बच्चे को सहायक–गृह में रखने के बाद ही, पोषण–गृह अथवा प्रमाणित स्कूलों में भेजा जाता है। इन संस्थाओं में बच्चों की पृष्ठभूमि का अध्ययन किया जाता है। ये स्वयंसेवी संस्थाओं और सरकार दोनों के द्वारा चलाए जाते हैं। इनमें बच्चों को **कुछ औद्योगिक प्रशिक्षण, स्कॉउटिंग, प्राथमिक शिक्षा, संगीत एवं कृषि आदि के शिक्षण की सुविधाएँ** प्रदान की जाती है। इस संस्था में रहने वाले अधिकतर बालक सामान्यतः अपराध नहीं करते।

बोर्स्टल स्कूल

सबसे पहले अमेरिका में **बोर्स्टल नामक** स्थान पर इन विद्यालयों की स्थापना की गई थी, इसलिए इन्हें बोर्स्टल स्कूल के नाम से जाना जाता है। ये स्कूल उन किशोर अपराधियों के लिए होते हैं, जो 12 से 18 वर्ष की उम्र के होते हैं। यहाँ उन्हें अच्छे आचरण और अनुशासन में रहना सिखाया जाता है। भारत में बोर्स्टल विद्यालयों में बाल अपराधियों को औद्योगिक प्रशिक्षण भी दिया जाता है। दो या तीन वर्ष तक अपराधी को इन विद्यालयों में रखा जाता है, और बाद में किसी परिवीक्षा अधिकारी के साथ सम्बद्ध कर दिया जाता है। राजस्थान में उदयपुर का विद्या भवन भी, एक प्रकार की बोर्स्टल संस्था है, जहाँ अपराधी किशोरों को रखा जाता है। जयपुर शहर में बोर्स्टल स्कूल की स्थापना नहीं हुई है।

राजस्थान राज्य मानवाधिकार आयोग

जैसा कि हम सभी जानते हैं, प्रत्येक व्यक्ति को समानता, स्वतंत्रता एवं गरिमापूर्ण तरीके से जीने का अधिकार है, जो भारतीय संविधान के भाग तीन में मूलभूत अधिकारों में वर्णित है। न्यायालय भी उसको मान्यता देता है। इसके अलावा अन्तर्राष्ट्रीय समझौते के फलस्वरूप संयुक्त राष्ट्र की महासभा द्वारा भी स्वीकार किए गए हैं, व देश के न्यायालयों द्वारा प्रवर्तनीय है।

इन अधिकारों में प्रदूषणमुक्त वातावरण में जीने का अधिकार, चिकित्सा सुविधा का अधिकार, अभिरक्षा में यातनापूर्ण और अपमानजनक व्यवहार न होने सम्बन्धी अधिकार, महिलाओं के साथ सम्मान–जनक व्यवहार का अधिकार, स्त्री, पुरूष, बच्चे व वृद्ध लोगों के समान अधिकार आदि। इन अधिकारों का हनन जाति, धर्म, भाषा तथा लिंग–भेद के आधार पर नहीं किया जा सकता। **ये सभी अधिकार जन्मजात अधिकार हैं**, व उनके हनन का मामला राज्य मानवाधिकार के कार्यक्षेत्र में आता है।

कल्याणकारी राज्य में सरकार का दायित्व बनता है, कि मानव अधिकारों की सुरक्षा के लिए प्रत्येक व्यक्ति के प्रति वह जवाबदायी हो। सुशासन वह महत्वपूर्ण तत्व है, जो मानव अधिकारों की रक्षा को प्रभावी तौर पर सुनिश्चित करता है। बेहतर समाज के लिए जरूरी है, मानव अधिकारों का संरक्षण हो।

बालकों के अधिकार

हम यह भी जानते हैं, कि बच्चों को देश का भविष्य कहा गया है। भावी नागरिक होने के नाते उन पर देश का भविष्य टिका होता है। परन्तु फिर भी उनके संतुलित विकास के मार्ग में अनेक बाधाएँ व रूकावटें निरन्तर बनी रहती हैं। उनके अधिकारों में सबसे बड़ी रूकावट व समस्या भीख माँगने की प्रवृत्ति व बाल–श्रम है। बाल–श्रम के साथ बच्चों में अशिक्षा, कुपोषण, विकास की कमी, बीमारियाँ भी शामिल हैं, व इसी कारण बच्चों के विरूद्ध छोटे–छोटे अपराधों के साथ बड़े अपराध भी, जैसे–बलात्कार, अपहरण, कन्याओं को बेचना, शिशु–हत्या, भ्रूण–हत्या एवं बाल–विवाह जैसे अपराध भी होते हैं।

भारत में बाल–श्रम से सम्बन्धित कई अधिनियम बने हैं, जैसे :–

- **बाल अधिनियम (1933)** इसमें बाल श्रमिक को बंधक बनाने वाले के विरूद्ध 50 रूपये, एवं दलाल या नियोक्ता के खिलाफ 200 रूपये जुर्माने का प्रावधान है।
- **बाल रोजगार अधिनियम (1938)** इसमें बच्चों की सुरक्षा के लिए कई प्रावधान रखे गए हैं। अधिनियम के निर्धारित परिशिष्ट के तहत अयोग्यता की सूची में रखा गया है।
- **न्यूनतम मजदूरी अधिनियम (1948)** इसमें न्यूनतम मजदूरी तय की गई है। साथ ही 14 वर्ष से कम आयु के बच्चों के संदर्भ में **साढ़े चार घण्टे** का सामान्य कार्य दिवस माना गया है।
- **खान अधिनियम (1952)** संशोधित अधिनियम 1983 में 18 वर्ष से कम आयु के किसी भी व्यक्ति को, खदानों या जमीन के नीचे कार्य करने की अनुमति नहीं दी गई है।
- **बाल अधिनियम (1959)** के अनुसार संयुक्त राष्ट्र महासंघ द्वारा बाल अधिकारों की अन्तर्राष्ट्रीय घोषणा 1959 में की गई, जिसमें उन्होंने दस सिद्धान्तों पर अपनी रजामंदी बताई, जिसमें **भाईचारा, मित्रता एवं शांति** आदि हैं। इसमें बाल संयुक्त राष्ट्रीय एवं राज्य की बाल अधिकारों एवं स्वयंसेवी संस्थाओं और माता–पिता व स्थानीय सिद्धान्तों को मंजूरी दी गई है। जन्म के साथ ही बालक राष्ट्रीयता का अधिकारी होगा व स्वस्थ पोषण, मकान सुविधा एवं शारीरिक आदि की शिक्षा दी जायेगी। छोटी उम्र में माँ से अलग नहीं किया जायेगा, तथा उनकी सभ्यता का विकास एवं योग्यता का विकास होगा। सामाजिक व नैतिक दायित्वों के हिसाब से, माता–पिता का शिक्षा के लिए दायित्व होगा।

किशोर न्याय कार्यक्रम में **किशोर न्याय अधिनियम (2000)** के अन्तर्गत बाल गृहों के निर्माण और इसके रख–रखाव के लिए, राज्य सरकारों को इनके व्यय की आवश्यकता के लिए 50 प्रतिशत तक की सहायता प्रदान की जाती है। इसके अलावा बच्चों की देखरेख और बेसहारा बच्चों के लिए समेकित कार्यक्रम एवं दत्तकता को ग्रहण करने के लिए बढ़ावा, शिशु–गृहों में भी योजना का प्रावधान है। इसके अलावा यह भी देखने में आया है, कि अभी तक घरेलू कार्य करने वाले छोटे बच्चों को कानूनी प्रावधान में शामिल नहीं किया गया है। कट्स संस्था 1983 से छोटे व निम्न तबके के अधिकारों की सुरक्षा के लिए प्रयत्नशील हैं और पाँच जनचेतना के बड़े कार्यक्रम भी कर रही है। इस सेमीनार के माध्यम से **"हम भी बच्चे हैं"**, परियोजना राज्य स्तरीय एडवोकेसी सेमीनार आयोजित कर रही है।

अतः गरीब बच्चों का किसी भी तरह से शोषण न हो, व कैरियर एजेन्ट उसका लाभ न लें। इसके लिए सरकार की तरफ से कानून बनाना जरूरी है, जिसमें माता–पिता की भी जिम्मेदारी रहे, कि वे अपने फायदे के लिए अपने बच्चों को घरेलू व अन्य काम में न भेजें। साथ ही काम करने वाले बच्चों व मालिकों की ग्रीडी (लालची) प्रवृत्ति को रोकना होगा, तथा **"राइड एण्ड इक्विलिटी"** का ध्यान रखना होगा। बच्चों की उम्र व क्षमता के अनुसार कार्य एवं समय नियत होना जरूरी है। पढ़ाई के साथ–साथ अन्य मनोरंजन, खेलकूद, टी०वी०, अखबार व एक दिन की छुट्टी का प्रावधान हो, उनको पूरा नाश्ता व अन्य सुविधाएँ उपलब्ध हो। राज्य सरकार द्वारा भी दिन का भोजन बालकों को कुछ हद तक उपलब्ध कराया जा रहा है। वर्तमान में बेरोजगारी की स्थिति को दृष्टिगत रखते हुए, विधि में यह प्रावधान अवश्य होना चाहिए, कि यदि कोई बालक अपनी शिक्षा एवं खेलकूद के समय के अतिरिक्त पैतृक व्यवसाय में, अभिभावक की मदद करता है, तो वह उसकी शिक्षा का ही एक अंग है, जो आगे चलकर उसके रोजगार से जुड़ेगा। सरकार के साथ–साथ स्वयंसेवी संस्थाओं, व हम सभी का यह प्रयास होना चाहिये, कि ये वास्तविक रूप से लागू हो, जिससे ये बालक देश के भविष्य को उज्ज्वल बनाने में सहायक हो।

किशोर न्याय अधिनियम 2000

इस अधिनियम को **30 दिसम्बर 2000** को राष्ट्रपति की अनुमति प्राप्त हुई और यह 01 अप्रेल 2001 से प्रभावी हुआ है। इस अधिनियम ने **पूर्ववर्ती किशोर न्याय अधिनियम, 1986** का स्थान लिया है। अधिनियम की उद्देशिका के अनुसार इसके उद्देश्य निम्नानुसार है :–

- उपेक्षित एवं विधि विवादित किशोरों की देखरेख और उनका संरक्षण।
- उनके उपचार, विकास एवं पुनर्वास आदि के उपाय करना।
- अपचारी किशोरों के प्रकरणों में न्याय निर्णयन करके, उनके आवास सम्बन्धी आदेश पारित किये जाना।

इस अधिनियम को पारित किये जाने का एक प्रयोजन यह भी रहा है, कि इससे अपराधी एवं विधि विवादित किशोरों के लिए सम्पूर्ण भारत में, एक समान किशोर न्याय प्रणाली की स्थापना की जा सके। इस अधिनियम द्वारा अपराधी एवं विधि विवादित किशोरों के मामलों की जाँच अन्वेषण तथा विचारण के सम्बन्ध में मानक निर्धारित हैं, तथा उनके कल्याण से जुड़े संगठनों में समन्वय स्थापित किये जाने के प्रयास किये गये हैं। यह अधिनियम संयुक्त राष्ट्र द्वारा निर्धारित किशोर न्याय सम्बन्धी न्यूनतम मानकों के अनुसरण में पारित किया गया है।

इस अधिनियम के अध्याय दो में, कुल 28 धारायें हैं, जिनमें किशोर न्याय बोर्ड के गठन, उसकी कार्यप्रणाली एवं शक्तियाँ, संप्रेक्षण–गृह एवं विशेष–गृह आदि का गठन, तथा किशोरों की जमानत आदि सम्बन्धी नियमों का समावेश है। **धारा 4 के अनुसार** किशोर न्याय बोर्ड में एक न्यायिक मजिस्ट्रेट (प्रथम वर्ग) तथा दो सामाजिक कार्यकर्ता होंगे, जिनमें से एक महिला कार्यकर्त्ता होना आवश्यक होगा। बोर्ड द्वारा मामले के निपटारे के समय कम से कम दो सदस्यों की उपस्थिति अनिवार्य है, जिसमें से एक न्यायिक मजिस्ट्रेट होना चाहिए। किशोर न्याय बोर्ड की शक्तियों का उल्लेख **अधिनियम की धारा 6** में किया गया है। इन शक्तियों का प्रयोग उच्च न्यायालय तथा सत्र न्यायालय द्वारा भी किया जा सकेगा, यदि उनके समक्ष अपील या पुनरीक्षण हेतु प्रकरण लाया गया हो।

अधिनियम की धारा 8 में, संप्रेक्षण गृह सम्बन्धी प्रावधान हैं। इनमें विचारणाधीन विधि विवादित किशोरों को रखा जाता है। इन गृहों में विधि विवादित किशोरों के रहने, भरण–पोषण, चिकित्सा एवं उपचार की समुचित व्यवस्था की जाती है। यदि विधि विवादित किशोर को किसी अपराध का दोषी पाया जाता है, तो किशोर न्याय बोर्ड उसे जमानत पर छोड़ सकता है, या परिवीक्षा का लाभ देकर भी, माता–पिता या संरक्षक की देखरेख हेतु सौंप सकता है। इनमें से कोई उपलब्ध न होने की दशा में बोर्ड विधि विवादित किशोर को विशेष गृह में रखे जाने के आदेश पारित कर सकता है। यदि किशोर की आयु सत्रह वर्ष से अधिक, लेकिन अठारह वर्ष से कम हो, तो उसे दो वर्षो से अधिक अवधि के लिए विशेष गृह में रहने का

आदेश पारित नहीं किया जा सकेगा। अन्य मामलों में किशोर को अठारह वर्ष की आयु पूर्ण करने तक, विशेष गृह में रखा जा सकता है।

सारांश

जब कोई बच्चा संस्था से मुक्त किया जाता है, तो उसे अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ता है। बाल न्याय अधिनियम में बाल गृहों से मुक्त बच्चों की बाद की देख–रेख योजना हाथ में लेने के लिये **"बालक की देख–रेख संगठनों"** को स्थापित करने का प्रावधान किया गया है। संस्था से किसी सदस्य के विमुक्त होने से ठीक पूर्व परिवीक्षा अधिकारी के सदस्य को, समाज में वापिस आने के लिये तैयार करना पड़ता है। यदि सदस्य अपने परिवार में वापस जाने में कठिनाई महसूस करता है और उसे प्रश्रय देने वाला कोई नहीं है, तो परिवीक्षा अधिकारी उसके लिये किसी बाद वाले देखरेख गृह में प्रश्रय देता है, जहाँ वह तब तक रह सकता है, जब तक कि वह अपनी स्वयं की जीविका कमाने का साधन न बना लें।

भारतीय दण्ड प्रक्रिया संहिता एवं दण्ड संहिता के उपर्युक्त प्रावधानों के अतिरिक्त किशोर अपराधियों के प्रति उपचारात्मक पद्धति अपनाई जाने के लिए अन्य संविधिक कानून भी अधिनियमित किये गये है। किशोर तथा युवा अपचारियों के दाण्डिक उपचार से सम्बन्धित कानून मुख्यतः दो केन्द्रीय अधिनियमों में समाविष्ट हैं, जो किशोर न्याय (बालकों की देखरेख और संरक्षण) अधिनियम, 2000 तथा अपराधी परिवीक्षा अधिनियम, 1958 हैं। परिवीक्षा अधिनियम के अन्तर्गत किशोर अपराधियों को परिवीक्षाधीन रखकर, उनमें सुधार का प्रयास किया जाता है। इन दोनों कानूनों में अन्तर्विष्ट मूलभूत सिद्धान्त यह है, कि किशोर स्वभावतः ही शरारती होते हैं, अतः उनके प्रति सहिष्णुता और उदारता का व्यवहार किया जाना चाहिए। इसके अतिरिक्त, अपराध करते समय किशोर अपराधी की मनःस्थिति वैसी नहीं होती, जैसी कि किसी सामान्य अपराधी की होती है। अतः दोनों को समान रूप से विचारित और दण्डित करना उचित नहीं है।

अप्रैल 01, सन् 2001 से किशोर न्याय (बालकों की देखरेख और संरक्षण) अधिनियम, 2000 प्रभावी होने के पूर्व, भारत में किशोर न्याय अधिनियम, 1986 लागू था, जो एक केन्द्रीय कानून था। इस अधिनियम के पूर्व बाल अधिनियम, 1960 प्रवृत्त था, जिसके अन्तर्गत राज्यों को यह छूट दी गई थी, कि वे अपने क्षेत्रधीन किशोरों एवं बालकों के संरक्षण के लिए राज्य स्तर पर अधिनियम पारित कर सकते हैं। तदानुसार अनेक राज्यों ने अपने बाल अधिनियम पारित किए थे।

संदर्भ सूची

- **बम्बई डेविड सैसून इण्डिस्ट्रियल एण्ड रिफोर्मेट्री स्कूल (1843)** – सैक्शन 366 (1) क्रिमिनल पिनल कोड।
- **सुधारालय अधिनियम (1876)** – जम्मू कश्मीर को छोड़कर पूरे भारतवर्ष में लागू।
- **भारतीय जेल समिति (1919–1920)** – में गठित, जो मद्रास बाल अधिनियम में विद्यमान है।
- गुप्ता, एम०एल० एवं शर्मा डी०डी० (2006), **"अपराध और समाज"** साहित्य भवन पब्लिकेशन, आगरा, पृ०सं० 76–82.
- **पूर्ववर्ती किशोर न्याय अधिनियम 1986, जिसका किशोर न्याय अधिनियम, 2000** के द्वारा निरसन हो चुका है।
- राजोरा, सुरेश चन्द्र (2000), **"समकालीन भारत की सामाजिक समस्याएँ"**, राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, जयपुर, पृ०सं० 28–35.
- **राजस्थान राज्य मानवाधिकार आयोग,** जयपुर, भूतपूर्व न्यायाधिपति, मद्रास एवं कर्नाटक हाईकोर्ट।
- **किशोर न्याय (बालकों की देखरेख तथा संरक्षण) अधिनियम, 2000,** जो 01 अप्रैल 2001 से प्रवृत्त है।
- जैन, न्यायमूर्ति एम० के० (2004), **"राजस्थान राज्य मानवाधिकार आयोग"**, जयपुर, पृ०सं० 102–119.

* * * * * * * * * * * * * * * *

11

कानून एवं महिलाएँ

डॉ० भोमाराम
एम०ए० (भूगोल), बी०एड०, पीएच०डी० (भूगोल)
सहायक आचार्य (भूगोल)
राजकीय महाविद्यालय टहला,
राजगढ़, अलवर (राज०)

प्रस्तावना

पुरूष प्रधान समाज में 20वीं सदी महिलाओं के लिये, मिश्रित परिणामों वाली रही हैं। 20वीं सदी में खास तौर से, इसके उत्तारार्द्ध में एक तरफ जहाँ **महिलाओं के साथ शोषण एवं अत्याचार** की घटनाओं में वृद्धि हुई हैं, वहीं दूसरी तरफ महिलाओं के उत्थान एवं विकास के लिये कई कल्याणकारी कानून भी बनाये गये हैं। **न्यायिक निर्णयों की दृष्टि से** भी 20वीं सदी का उत्तरार्द्ध, महिलाओं के लिये काफी सार्थक रहा हैं। सर्वप्रथम सन् 1860 में **भारतीय दण्ड संहिता** का निर्माण हुआ था, लेकिन आगे चलकर देश, काल और परिस्थितियों के अनुसार न केवल पूर्व कानूनों में संशोधन हुये, अपितु नये–नये कानूनों का भी उद्भव हुआ। 20वीं सदी में बने कानूनों का आरम्भ, हम भारतीय संविधान से करते हैं। 26 जनवरी 1950 को अंगीकृत किये गये, भारतीय संविधान में महिलाओं के लिये कई विशेष व्यवस्थायें की गई। संविधान के **अनुच्छेद 15 (1) व (2)** के अंतर्गत, जहाँ **धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग एवं जन्म स्थान के आधार पर** विभेद